ब्रेकिंग न्यूज के दौर में हिन्दी के चलन पर ब्रेक

आप हिन्दी के हिमायती हों और हिन्दी को प्रतिष्ठापित करने के लिए हिन्दी को अलंकृत करते रहें, उसमें विशेषण लगाकर हिन्दी को श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम बताने की भरसक प्रयत्न करें लेकिन सच है कि नकली अंग्रेजियत में डूबे हिन्दी समाचार चैनलों ने हिन्दी को हाशिये पर ला खड़ा किया है। हिन्दी के समाचारों में अंग्रेजी शब्दों की भरमार ने दर्शकों को भरमा कर रख दिया है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि पत्रकारिता की राह से गुजरते हुए समाचार चैनल मीडिया में बदल गए हैं। संचार या जनसंचार शब्द का उपयोग अनुचित प्रतीत होता है तो विकल्प के तौर पर अंग्रेजी का मीठा सा शब्द मीडिया तलाश लिया गया है।

अब मीडिया का हिन्दी भाव क्या होता है, इस पर चर्चा कभी लेकिन जब परिचय अंग्रेजी के मीडिया शब्द से होगा तो हिन्दीकी पूछ-परख कौन करेगा। हालांकि पत्रकारिता को नेपथ्य में ले जाने में अखबार और पत्रिकाओं की भी भूमिका कमतर नहीं है। चैनलों की नकल करते हुए अखबारों ने खबरों और परिशिष्ट के शीर्षक भी अंग्रेजी शब्दों से भर दिए हैं। शहर से इन अखबारों को मोहब्बत नहीं, सिटी उन्हें भाता है। प्रधानमंत्री लिखने से अखबारों में जगह की कमी हो जाती है तो पीएम से काम चलाया जा रहा है। मुख्यमंत्री सीएम हो गए और आयुक्त कमिश्नर। जिलाधीश के स्थान पर कलेक्टर लिखना सुहाता है तो संपादक के स्थान पर एडीटर शब्द सहज हो गया है। यानि समाचार चैनल से लेकर अखबार के पन्नों में भी हिन्दी को दरकिनार किया जा रहा है। हालांकि इस दौर का मीडिया गर्व से इस बात को लिखता जरूर है कि हिन्दी का श्रेष्ठ चैनल या हिन्दी का सबसे ज्यादा बिकने वाला अखबार लेकिन हिन्दी को कितना स्थान है, यह उन्हें भी नहीं मालूम।

हम हर साल 14 सितम्बर को इस बात को लेकर शोर मचाते रहें कि हिन्दी माथे की बिंदी है। हिन्दी से हमारा स्वाभिमान है। हिन्दी हमारी पहचान है लेकिन सच यही है कि पत्रकारिता से मीडिया में बदलते परिदृश्य में हिन्दी हाशिये पर है। हिन्दी के चैनलों के पास हिन्दी के शब्दों का टोटा है। उनके पास सुप्रभात कमतर शब्द लगता है और गुडमार्निंग उनके लिए ज्यादा प्रभावी है। दस बड़ी खबरों के स्थान पर टॉप टेन न्यूज की सूची पर्दे पर दिखाना उन्हें ज्यादा रूचिकर लगता है। हिन्दी के नाम पर कुमार विश्वास की कविता का पाठ कराने वाले चैनलों को कभी निराला या पंत की कविताओं को सुनाने या पढ़ाने में रूचि नहीं होती है।

सच तो यह है कि हिन्दी की पीठ पर सवार होकर अंग्रेजी की टोपी पहने टेलीविजन न्यूज चैनलों ने जो हिन्दी को हाशिये पर लाने की कोशिश शुरू की है, वह हिन्दी के लिए अहितकर ही नहीं बल्कि

दुर्भाग्यजनक है। हिन्दी को प्रतिष्ठा दिलाने वालों का दिल इस बात से दुखता है कि जिनकी पहुंच करोड़ों दर्शक और पाठक के बीच है, वही संचार माध्यम हिन्दी से दूर हैं। इन संचार माध्यमों की आत्मा हिन्दी के प्रति जाग गई तो हिन्दी को प्रतिष्ठापित करने में कोई बड़ी बाधा नहीं होगी लेकिन यह संभव होता नहीं दिखता है।

हम तो हिन्दी के दिवस, सप्ताह और अधिक से अधिक हिन्दी मास तक ही स्वयं को समेट कर रखना चाहते हैं। हिन्दी की श्रीवृद्धि के नाम पर यह पाखंड हम दशकों से करते चले आ रहे हैं और शायद यह क्रम ना टूटे। इसे हिन्दी के प्रति पाखंड परम्परा का नाम भी दे सकते हैं। कुछेक को यह नागवार गुजरेगा लेकिन सच से कब तक मुंह चुराएंगे।

हिन्दी की यह दुर्दशा अंग्रेजी से प्रभावित हिन्दी समाचार चैनलों के आने के पहले से हो रही है। मेरी तरह आपने भी कभी महाविद्यालय की परीक्षा दी होगी। परीक्षा में प्रश्न पत्र आपके सामने शिक्षक ने रखे होंगे और उसमें प्रश्न पहले हिन्दी में और इसी हिन्दी का रूपांतरण अंग्रेजी में दिया होता है।

अब असल बात यह है कि प्रश्न पत्र के निर्देश को पढ़ें जिसमें साफ साफ लिखा होता है कि हिन्दी में कोई त्रुटि हो तो अंग्रेजी के सवाल ही मान्य है। अर्थात हमें पहले समझा दिया गया है कि हिन्दी के चक्कर में मत पड़ो, अंग्रेजी ही सर्वमान्य है। हिन्दी पत्रकारिता में शिक्षा लेकर हाथों में डिग्री लेकर भटकते प्रतिभावान विद्यार्थियों को उचित स्थान क्यों नहीं मिल पाता है तो इसका जवाब है कि उन्हें अंग्रेजी नहीं पढ़ाया गया। बताया गया कि हिन्दी माध्यम में भी अवसर हैं। यदि ऐसा है तो प्रावीण्य सूची में आने वाले विद्यार्थियों का भविष्य अंधेरे में क्यों है ?

टेलीविजन चैनलों में उनका चयन इसलिए नहीं हो पाता है कि वे अंग्रेजी नहीं जानते हैं या उस तरह की अंग्रेजी नहीं जानते हैं जिसके बूते पर वे एलिट क्लास को ट्रीटमेंट दे सकें। ऐसे में हिन्दी के प्रति विमोह और अंग्रेजी के प्रति मोह स्वाभाविक हो जाता है। हालांकि हिन्दी के प्रति समर्पित लोगों को 'एक दिन हमारा भी टाइम आएगा' जैसे भाव से भरे लोग उम्मीद से हैं।

हिन्दी के हितैषी भी इस बात का सुख का अनुभव करते हैं कि वे वर्ष में एक बार हिन्दी को लेकर बोलते हैं, लिखते हैं और हिन्दी की श्रीवृद्धि के लिए लिए विमर्श करते हैं। एक दिन, एक सप्ताह और एक माह के बाद हिन्दी आले में टांग दी जाती है। कुछ लोग हैं जो वर्ष भर क्या लगातार हिन्दी की प्रतिष्ठा के लिए प्राण-प्रण से जुटे हुए हैं। इन लोगों की गिनती अंगुली भर की है लेकिन हिन्दी को हाशिये पर डालने वालों की संख्या असंख्य है। इस पर सबसे पहले मीडिया कटघरे में आता है।

यूरोप की नकल करते हुए हम भूल जाते हैं कि हिन्दीभाषी जनता ही इनके चैनल को टीआरपी दिलाती है। उनके होने से ही मीडिया का अस्तित्व है लेकिन करोड़ों लोगों की बोली-भाषा को दरकिनार कर उस अंग्रेजी को सिर पर कलगी की तरह बांधे फिरते हैं, जो उन्हें अपना अर्दली समझती है।

यह भी सच है कि टेलीविजन चैनलों में काम करने वाले साथियों में अधिसंख्य मध्यमवर्गीय परिवार से आते हैं जिनकी पृष्ठभूमि में शायद ही अंग्रेजियत हो लेकिन उन्हें टेलीविजन प्रबंधन भी लार्ड मैकाले की तरह अंग्रेजी बोलने और लिखने पर मजबूर करता है। मैकाले की समझ में यह बात आ गई थी कि भारत

को बर्बाद करना है तो उसकी शिक्षा पद्धति को नष्ट करो और उनमें कुंठा भर दो। मैकाले यह करने में कामयाब रहा और मैकाले के रूप में आज लाखों मीडिया मैनेजर यही कर रहे हैं। जिस किसी को अंग्रेजी नहीं आती, वे हीनता के भाव से भरे हैं। अंग्रेजी उन पर लाद दिया गया है क्योंकि अंग्रेजी के बिना जीवन शून्य है।

मैं अपने निजी अनुभव से कह सकता हूं कि आज से कोई 35 वर्ष पूर्व जब पत्रकारिता का सबक लेने गया वहां भी अंग्रेजी जानने वाले को हमसे ज्यादा सम्मान तब भी मिलता था और आज भी हम। हम हिन्दीपट्टी के लोग दरकिनार कर दिया करते थे। तब मीडिया उत्पन्न नहीं हुआ था। अखबार था तो पत्रकारिता थी। आज की तरह पेडन्यूज नहीं हुआ करता था बल्कि पीत पत्रकारिता की यदा-कदा चर्चा हुआ करती थी। लेकिन हमारे गुरु तो हिन्दुस्तानी भाषा में पगे-बढ़े थे और वे हमें आकर्षित करते थे। हमें लगता था कि जिस भाषा को समाज समझ सके, वही पत्रकारिता है।

शायद आज भी हम पिछली पंक्ति में खड़े हैं तो हिन्दी के प्रति मोह के कारण है या कह सकते हैं कि अंग्रेजी को अंगीकार नहीं किया, इसलिए भी पीछे धकेल दिए गए। हालांकि सच यह भी है कि हम जो कर रहे हैं, वह आत्मसंतोष है। किसी एक अघढ़ समाजी का फोन आता है कि आप का फलां लेख पढऩे के बाद मैं आपको फोन करने से रोक नहीं पाया तो लगता है कि मैंने यहां आकर अंग्रेजी को परास्त कर दिया है। क्योंकि फोन करने वाला कोई टाई-सूट पहने नकली किस्म का बुद्धिजीवी नहीं बल्कि ठेठ भारतीय समाज का वह पुराने किस्म का कोई आदमी है जिसके पास दिमाग से अधिक दिल है।

हिन्दी की श्रेष्ठता के लिए, हिन्दी को प्रतिष्ठापित करने लिए दिमाग नहीं दिल चाहिए। दिल वाले आज भी पत्रकारिता कर रहे हैं और दिमाग वालों की जगह मीडिया में है। हिन्दी को श्रेष्ठ स्थान दिलाना चाहते हैं तो दिल से हिन्दी को गले लगाइए। हिन्दी दिवस और सप्ताह, मास तो औपचारिकता है। एक बार प्रण लीजिए कि हर सप्ताह हिन्दी में एक लेख लिखेंगे, हिन्दी में संवाद करेंगे। हम बदलेंगे तो समाज बदलेगा। मीडिया का क्या है, वह तो बदल ही जाएगा।

(लेखक भोपाल की शोध पत्रिका “समागम” के सम्पादक हैं)